

भारत के सर्वोच्च न्यायालय में

सिविल अपीलिय क्षेत्राधिकार

सिविल अपील संख्या 8509/2024

[विशेष अनुमति याचिका (सिविल) संख्या 22278/2011]

राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय,

बीकानेर, अपने रजिस्ट्रार के माध्यम से

...अपीलार्थी

बनाम

डॉ. ज़बर सिंह सोलंकी और अन्य.

...प्रतिवादीगण

प्रत्यर्थी सं. 1: डॉ. ज़बर सिंह सोलंकी

प्रत्यर्थी सं. 2: डॉ. शियादत्त सिंह (मृत)

द्वारा प्रस्तुत:

(i): श्रीमती नीलम सिंह

(ii): श्रीमती सुनीता सिंह

प्रत्यर्थी सं. 3: डॉ. रवि प्रकाश नंदवाना

प्रत्यर्थी सं. 4: डॉ. नंदकिशोर राजोरा

प्रत्यर्थी सं. 5: डॉ. हनुमान सिंह

प्रत्यर्थी सं. 6: डॉ. एस.एम. सिंघी

प्रत्यर्थी सं. 7: डॉ. बी. प्रसाद सिंह
प्रत्यर्थी सं. 8: मोतीलाल जलोरा
प्रत्यर्थी सं. 9: डॉ. एस.एन. यादव
प्रत्यर्थी सं. 10: डॉ. चंपालाल नागदा
प्रत्यर्थी सं. 11: डॉ. कुसुम माथुर
प्रत्यर्थी सं. 12: श्री एम.एस. भटनागर
प्रत्यर्थी सं. 13: डॉ. जसवंत सिंह चुंडावत
प्रत्यर्थी सं. 14: श्री महावीर वर्मा
प्रत्यर्थी सं. 15: डॉ. शिव चरण लाल चौधरी
प्रत्यर्थी सं. 16: डॉ. गिरधारी लाल पाठक
प्रत्यर्थी सं. 17: डॉ. एम प्रसाद शर्मा
प्रत्यर्थी सं. 18: डॉ. देवी लाल लावटी (मृत)

द्वारा प्रस्तुत:

- (i) श्रीमती चन्द्र कला,
- (ii) श्रीमती नीता सोमानी
- (iii) श्रीमती नीना झंवर
- (iv) सुषमा माहेश्वरी

प्रत्यर्थी सं. 19: डॉ. पी वल्लभ दवे
प्रत्यर्थी सं. 20: डॉ. आर. कुमार मेहरा
प्रत्यर्थी सं. 21: डॉ. एल.एन. दाधीच
प्रत्यर्थी सं. 22: डॉ. अशोक कुमार
प्रत्यर्थी सं. 23: डॉ. फतेहलाल जोशी
प्रत्यर्थी सं. 24: डॉ. एस.एल. मेहता

प्रत्यर्थी सं. 25: श्री जयद्रथ शर्मा
प्रत्यर्थी सं. 26: डॉ. पी.सी. पालीवाल
प्रत्यर्थी सं. 27: डॉ. भंवर लाल पारीक
प्रत्यर्थी सं. 28: डॉ. सीताराम दधीच
प्रत्यर्थी सं. 29: डॉ. जुगलकिशोर शर्मा
प्रत्यर्थी सं. 30: डॉ. शिवदयाल सिंह (मृत)

द्वारा प्रस्तुत:

(i) श्रीमती गीतादेव

(ii) देवी सिंह

प्रत्यर्थी सं. 31: श्री हंसराज अग्रवाल (मृत)

द्वारा प्रस्तुत:

(i) श्रीमती सीता देवी अग्रवाल

(ii) राकेश अग्रवाल

(iii) सोमदत्त अग्रवाल

प्रत्यर्थी सं. 32: डॉ. गणेशराम चौधरी

प्रत्यर्थी सं. 33: श्री एम. प्रसाद जैन

प्रत्यर्थी सं. 34: श्री बी.एस. वर्मा

प्रत्यर्थी सं. 35: श्यामराम चंद्रसुले

प्रत्यर्थी सं. 36: डॉ. भानुप्रताप सिंह

प्रत्यर्थी सं. 37: डॉ. विट्ठल शर्मा

प्रत्यर्थी सं. 38: डॉ. (श्रीमती) विजयलक्ष्मी माथुर

प्रत्यर्थी सं. 39: डॉ. मंसूर अली शाम

प्रत्यर्थी सं. 40: डॉ. फकीर मोहम्मद कुरैशी

प्रत्यर्थी सं. 41: डॉ. उदयसिंह नंदा

प्रत्यर्थी सं. 42: डॉ. एम.सी. सरस्वती

प्रत्यर्थी सं. 43: डॉ. के.पी. शर्मा (मृत)

प्रतिनिधि द्वारा

(i) श्री. भवेंद्र तिवारी

(ii) श्री त्रिभुवन नारायण तिवारी

प्रत्यर्थी सं. 44: डॉ. सीताराम चौधरी

प्रत्यर्थी सं. 45: डॉ.माणक चंद जैन

प्रत्यर्थी सं. 46: डॉ. अल्लाहनूर

प्रत्यर्थी सं. 47: डॉ. जुहारसिंह

प्रत्यर्थी सं. 48: डॉ. पी.के.एस. कुशवाह

प्रत्यर्थी सं. 49: डॉ. निहालसिंह

प्रत्यर्थी सं. 50: डॉ. उपेंद्र सिंह रावत

प्रत्यर्थी सं. 51: श्री अब्दुल गफ्फार

प्रत्यर्थी सं. 52: डॉ. एन.के. बेबेल

प्रत्यर्थी सं. 53: डॉ. डी.के. जैन

प्रत्यर्थी सं. 54: श्री पी.पी. बाजपेयी

प्रत्यर्थी सं. 55: राजस्थान राज्य, सचिव, कृषि विभाग, राजस्थान सरकार, जयपुर के माध्यम से

प्रत्यर्थी सं. 56: महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर अपने रजिस्ट्रार के माध्यम से

के साथ

सिविल अपील संख्या 8510/2024

[विशेष अनुमति याचिका (सिविल) संख्या 22813/2011]

राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

...अपीलार्थी

बनाम

डॉ. गीताबाली एवं अन्य.

...प्रतिवादीगण

प्रत्यर्थी सं. 1: डॉ. (श्रीमती) गीता बाली

प्रत्यर्थी सं. 2: डॉ. (श्रीमती) जे.के. जेथरा

प्रत्यर्थी सं. 3: डॉ. एच.सी. शर्मा

प्रत्यर्थी सं. 4: श्री एस.आर.एस. यादव

प्रत्यर्थी सं. 5: श्री अशोक भटनागर

प्रत्यर्थी सं. 6: श्री बी.एल. टांडी

प्रत्यर्थी सं. 7: श्री आर.एस. महला

प्रत्यर्थी सं. 8: डॉ. एन.एम. माथुर

प्रत्यर्थी सं. 9: श्री एन एस परिहार

प्रत्यर्थी सं. 10: डॉ. (श्रीमती) कल्पना चितले

प्रत्यर्थी सं. 11: श्री कुमरुलगनी कुरैशी

प्रत्यर्थी सं. 12: डॉ. (श्रीमती) अचला भटनागर

प्रत्यर्थी सं. 13: डॉ. (श्रीमती) बनानी चक्रवर्ती

प्रत्यर्थी सं. 14: श्री एम.के.पुरी

प्रत्यर्थी सं. 15: श्री हरिश्चंद्र गुप्ता

प्रत्यर्थी सं. 16: राजस्थान राज्य, ज़रिए सचिव, कृषि विभाग, राजस्थान सरकार, जयपुर

प्रत्यर्थी सं. 17: महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर, अपने रजिस्ट्रार के माध्यम से

केसाथ

सिविल अपील संख्या 8491/2024

[विशेष अनुमति याचिका (सिविल) संख्या 30963/2018]

राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय

...अपीलार्थी

बनाम

डॉ. मोहन लाल गुप्ता एवं अन्य.

.....प्रतिवादीगण

प्रत्यर्थी सं. 1: डॉ. मोहन लाल गुप्ता

प्रत्यर्थी सं. 2: डॉ. ए.के. गुप्ता

प्रत्यर्थी सं. 3: डॉ. ए.यू. सिद्दीकी

प्रत्यर्थी सं. 4: डॉ. एम.एस. राठौर

प्रत्यर्थी सं. 5: डॉ. आर.एस. गुप्ता

प्रत्यर्थी सं. 6: श्रीओ.पी. बोहरा

प्रत्यर्थी सं. 7: श्रीएम.एल. जोशी

प्रत्यर्थी सं. 8: पी.सी. मुंद्रा

प्रत्यर्थी सं. 9: डॉ. टी. एस. राजपुरोहित

हेडनोट्स

सेवा कानून - विश्वविद्यालय सेवा - चयन प्रक्रिया में हस्तक्षेप - न्यायालय की सीमाएं - राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर द्वारा आयोजित चयन प्रक्रिया में याचिकाकर्ता (डॉ. ज़बर सिंह सोलंकी) द्वारा चयन में अनियमितताओं का आरोप लगाया गया। न्यायालय ने यह पाया कि चयन समिति द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन नहीं किया गया और मूल्यांकन प्रक्रिया पारदर्शी नहीं थी। **अभिनिर्धारित:** तदनुसार, न्यायालय ने चयन प्रक्रिया को अवैध घोषित करते हुए नियुक्ति आदेश को निरस्त किया। न्यायालय चयन प्रक्रिया में तभी हस्तक्षेप करेगा जब यह प्रमाणित हो कि प्रक्रिया मनमानी, भेदभावपूर्ण या नियमों के प्रतिकूल थी।

निर्णय

अहसानुद्दीन अमानुल्लाह, न्यायाधिपति

पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना गया।

2. सभी याचिकाओं में अनुमति प्रदान की गई।

3. विशेष अनुमति याचिका (सिविल)¹ संख्या 22278/2011 और 22813/2011 से उत्पन्न सिविल अपीलें, डी.बी. सिविल विशेष अपील संख्या 382/2002 और 470/2002 में राजस्थान उच्च न्यायालय जोधपुर² द्वारा पारित दिनांक 20.01.2011 के सामान्य निर्णय और आदेश के विरुद्ध निर्देशित हैं, जिसके द्वारा अपीलार्थी द्वारा दायर रिट अपीलें खारिज कर दी गई थीं। एसएलपी (सी) संख्या 30963/2018 से उत्पन्न सिविल अपील, डी.बी. विशेष अपील रिट संख्या 714/2018 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 04.05.2018 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध निर्देशित हैं, जिसके द्वारा अपीलार्थी द्वारा दायर एक अन्य अपील खारिज कर दी गई थी।

संक्षिप्त तथ्यात्मक अवलोकन:

4. हम सबसे पहले 20.01.2011 के आदेश को चुनौती देने वाली याचिका पर विचार करने की प्रस्तावना रखते हैं। सुविधा के लिए, पक्षों की तथ्यात्मक पृष्ठभूमि, विवरण और स्थिति एसएलपी (सी) संख्या 22278/2011 सेउत्पन्न सिविल अपील के संदर्भ में होगी।

5. प्रत्यर्थी संख्या 1 से 54 को तत्समय उदयपुर विश्वविद्यालय में अनुसंधान सहायक के पद पर नियुक्त किया गया था, जिसका नाम बदल कर मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय कर दिया गया और बाद में विभाजन के बाद इसका नाम राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर³ (अपीलार्थी) विश्वविद्यालय अनुदान आयोग⁴ में कर दिया गया- अनुशंसित 300-600 रुपये के वेतन मान, जो उस समय प्रचलित था। 07.09.1977 को, उदयपुर विश्वविद्यालय ने 02.07.1974 की अधिसूचना के अनुसार अनुसंधान सहायकों को व्याख्याता के रूप में नामित किया, जिसमें "जूनियर व्याख्याता" शब्द को "व्याख्याता" शब्द से प्रतिस्थापित किया गया था। यह अधिसूचित किया गया था कि जूनियर व्याख्याता या समकक्ष पद धारण करने वाले शिक्षकों को व्याख्याता के रूप में नामित किया जाता है। परिणामस्वरूप, प्रत्यर्थीगण संख्या 1 से 54 को व्याख्याता के रूप में नामित किया गया। उन्हें बाद में सहायक प्रोफेसर के रूप में भी नामित किया गया और उन्हें अन्य व्याख्याताओं/सहायक प्रोफेसरों के लिए स्वीकार्य समान वेतनमान मिलना शुरू हो गया।

6. भारत सरकार, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, शिक्षा विभाग ने दिनांक 22.07.1988 के संचार माध्यम से विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में शिक्षकों के वेतनमान में संशोधन करने के लिए एक कैरियर उन्नति योजना⁵ को लागू करने का निर्णय लिया, ताकि प्रत्येक व्याख्याता को दिनांक 01.01.1986 से प्रभावी 3000-5000 रुपये के वरिष्ठ वेतनमान में रखा जा सके, यदि उस व्यक्ति ने नियमित नियुक्ति के बाद आठ साल की सेवा पूरी कर ली हो।
7. राजस्थान सरकार⁶ ने सी.ए.एस. लागू करने का निर्णय लिया। इसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी के प्रबंधन बोर्ड⁷ ने दिनांक 24.11.1988 को आयोजित अपनी बैठक में व्याख्याताओं और शोध सहायकों को संशोधित यूजीसी वेतनमान देने का संकल्प लिया। बोर्ड ने आगे व्याख्याताओं/शोधसहायकों को सहायक प्रोफेसर के रूप में नामित करने का संकल्प लिया। हालांकि, यह निर्णय लिया गया कि सहायक प्रोफेसर के रूप में सीधे नियुक्त किए गए व्यक्ति, सहायक प्रोफेसर के रूप में नामित व्याख्याताओं/शोधसहायकों से वरिष्ठ होंगे। दिनांक 24.11.1988 के बोर्ड के संकल्प की दिनांक 28.01.1989 को आयोजित अपनी बैठक में फिर से समीक्षा की गई और इसकी पुष्टि की गई। अपीलार्थी द्वारा दिनांक 04/06.05.1989 को अधिसूचना जारी की गई थी जिस भी विधिवत चयनित व्याख्याताओं/ शोधसहायकों को 01.01.1973 से सहायक प्रोफेसर के रूप में नामित किया जाएगा।
8. अपीलार्थी ने दिनांक 22.11.1990 के पत्र द्वारा विश्वविद्यालय में सहायक प्रोफेसरों के लिए सी.ए.एस. को लागू करने के लिए नियम अधिसूचित किए। हालांकि, बोर्ड के दिनांक

24.11.1988 के संकल्प को मंजूरी देने के लिए राज्य सरकार से अनुरोध किए जाने पर, राज्य सरकार ने अपीलार्थी के कुलपति से अनुरोध किया कि बोर्ड के दिनांक 24.11.1988 के संकल्प को रद्द कर दिया जाए। हालांकि, तथ्य यह रहा कि अनुमोदन की प्रत्याशा में, अपीलकर्ता ने पहले ही अपेक्षित आदेश जारी कर दिए थे। इसके बाद, बोर्ड ने दिनांक 29.07.1991 की अपनी बैठक में यह संकल्प लिया कि यदि किसी शोध सहायक या व्याख्याता को वैधानिक चयन समिति⁸ द्वारा सहायक प्रोफेसर के रूप में चुना गया है, तो उस की सेवा अवधि की गणना उस तिथि से की जाएगी, जब उसे एस.एस.सी. द्वारा सहायक प्रोफेसर के रूप में विधिवत चुना गया था।

9. बाद में, उपसचिव (ए.पी.), राजस्थान सरकार, कृषि (ग्रेड 2 ए) विभाग, जयपुर ने दिनांक 27.03.1991 को विश्वविद्यालय को बोर्ड के दिनांक 24.11.1988 के संकल्प में संशोधन करने का अनुरोध करते हुए एक पत्र लिखा। अनुरोध किया गया कि जिस आदेश द्वारा अनुसंधान सहायकों/ व्याख्याताओं को सहायक प्रोफेसर के रूप में नामित किया गया था, उसे रद्द किया जाए और सी.ए.एस. का लाभ केवल उन सहायक प्रोफेसरों को दिया जाए, जिन्हें एस.एस.सी. द्वारा नियमित चयन के बाद सीधे चुना गया था, न कि उन्हें जो सहायक प्रोफेसर के रूप में नामित थे। इस प्रकार, विश्वविद्यालय और बोर्ड द्वारा की गई अनुशंसा राज्य सरकार द्वारा स्वीकार नहीं की गई। इसलिए, अनुसंधान सहायक, जिन्हें व्याख्याता के रूप में नामित किया गया था और बाद में सहायक प्रोफेसर के रूप में पुनः नामित किया गया था, सी ए एस के

लाभ से वंचित हो गए। प्रत्यर्थी संख्या 1 से 54 ने ऐसी कार्रवाई को चुनौती दी, विद्वान एकल न्यायाधीश ने रिट याचिकाओं को स्वीकृति दी, विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय की खंडपीठ द्वारा पुष्टि की गई, जिसे वर्तमान बैच अपीलों में चुनौती दी गई है।

अपीलार्थीगण द्वारा प्रस्तुतियां /कथन:

10. अपीलार्थी ने दलील दी है कि व्याख्याता/ शोध सहायक के रूप में पिछली सेवाओं को सहायक प्रोफेसर के रूप में दी गई सेवाओं के समान कैडर पदोन्नति के लिए समान महत्व नहीं दिया जा सकता है। व्याख्याता/शोध सहायक का ग्रेड एक अलग ग्रेड है, हालांकि वेतन समान हो सकता है और इसलिए, उस ग्रेड में दी गई सेवाओं को सहायक प्रोफेसरों की सेवाओं के बराबर नहीं माना जा सकता है। यह आग्रह किया गया कि सी.ए.एस. के अनुसार, वे व्याख्याता सहायक प्रोफेसर वरिष्ठ वेतनमान के लिए पात्र हैं, जिन्होंने नियमित नियुक्ति के बाद 8 वर्ष की सेवा पूरी कर ली है और सेवा की वह अवधि नियमित नियुक्ति की तिथि से मानी जानी चाहिए। यह कहा गया कि, स्वीकृत तौर पर, प्रत्यर्थी संख्या 1 से 54 को नियमित आधार पर सहायक प्रोफेसर के रूप में नियुक्त नहीं किया गया था।

11. अपीलार्थी ने प्रस्तुत किया है कि केवल शोध सहायकों को व्याख्याता तथा उसके बाद सहायक प्रोफेसर के रूप में पुनः पदनामित करने से उन्हें सी.ए.एस. का लाभ नहीं दिया जा सकता था। यह लाभ केवल उन व्याख्याताओं को उपलब्ध था, जिन्हें राजस्थान विश्वविद्यालय शिक्षक एवं अधिकारी (नियुक्ति के लिए चयन) अधिनियम, 1974⁹ के तहत सहायक प्रोफेसर

के पद पर सीधे नियुक्त किया गया था तथा जिन्होंने आठ वर्ष की सेवा पूरी कर ली थी। इसके अलावा, यह भी कहा गया कि 1974 अधिनियम की धारा 2(ix) में निहित "शिक्षक" शब्द की परिभाषा शोध सहायकों पर लागू नहीं कही जा सकती। तथा 1974 अधिनियम की धारा 3 तथा 12 में निहित गैर-बाधा खंड पर विचार करते हुए, प्रत्यर्थी संख्या 1 से 54 को समान वेतनमान प्रदान कर के सी.ए.एस. की राहत नहीं दी जा सकती थी।

प्रत्यर्थी संख्या 1 से 54 तक के कथन:

12. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि 1974 अधिनियम के तहत एक "शोधसहायक" भी एक शिक्षक है और मुकदमेबाजी के पिछले दौर में, यह पहले ही माना जा चुका है कि वे उदयपुर विश्वविद्यालय अधिनियम, 1962 की धारा 2(जे) के तहत व्याख्याता हैं और यूजीसी द्वारा 27.11.1990 को जारी स्पष्टीकरण के मद्देनजर, इसमें किंचित मात्र भी संदेह नहीं है कि व्याख्याता या अन्य समकक्ष पदों पर कार्यरत व्यक्ति भी सी.ए.एस. के लाभ के हकदार थे।

13. जब शोध सहायकों को व्याख्याता और उसके बाद सहायक प्रोफेसर के रूप में पुनः नामित किया गया है, तो यह प्रस्तुत किया गया कि उन्हें व्याख्याताओं को उपलब्ध लाभ से वंचित नहीं किया जा सकता है। विद्वान वकील यह तर्क देंगे कि सी.ए.एस. में यह प्रावधान नहीं है कि ऐसे पदधारियों को लाभ उपलब्ध नहीं है, जिनके पदों को व्याख्याता के रूप में नामित किया गया है। अपीलार्थी के बोर्ड द्वारा सी.ए.एस. का लाभ देने का निर्णय सही था,

जिस पर राज्य सरकार द्वारा अनावश्यक रूप से आपत्ति जताई गई थी। प्रस्तुत किया गया कि राज्य सरकार के निर्देशों के तहत अपीलार्थी द्वारा इस तरह के निर्णय की अवैध रूप से समीक्षा की गई है।

विश्लेषण, तर्क और निष्कर्ष:

14. अभिलेखों का अवलोकन करने तथा पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने के पश्चात न्यायालय ने पाया कि खंडपीठ द्वारा पारित दिनांक 20.01.2011 के आदेश में हस्तक्षेप की आवश्यकता है। मूल रिट याचिकाकर्ताओं/तत्काल प्रत्यर्थी संख्या 1 से 54 के सीएस के लाभ के दावे को स्वीकार करने का मूल आधार यह है कि जब शोध सहायकों को व्याख्याता तथा उसके पश्चात सहायक प्रोफेसर के रूप में नामित किया गया है, तो उन्हें व्याख्याताओं को उपलब्ध लाभों से वंचित नहीं किया जा सकता।

15. इस स्तर पर, रिट याचिका संख्या 9555/1984 और समरूप मामलों में इस न्यायालय के दिनांक 25.04.1985 के पहले के आदेश का संदर्भ लेना उचित है, जिसके द्वारा यह स्पष्ट किया गया था कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश और उसके विरुद्ध एसएलपी (सी) को संक्षेप में खारिज करने का "कैडरों के एकीकरण, एक सामान्य वरिष्ठता सूची या आगे की पदोन्नति के लिए फीडर स्रोत से कोई लेना-देना नहीं था" और दोहराया कि "शोध सहायक और व्याख्याता अलग-अलग और विशिष्ट कैडर हैं।" इसके अलावा, न्यायालय ने कहा कि

एकमात्र सामान्य बात यह होगी कि दोनों को यूजीसी द्वारा अनुशंसित समान वेतनमान मिलेगा। न्यायालय ने यह भी कहा कि "शोध सहायक और व्याख्याता अलग-अलग कैडर बनाएंगे" और "उन्हें केवल इस आधार पर एक सामान्य वरिष्ठता सूची में लाने की आवश्यकता नहीं है कि दोनों को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा अनुशंसित समान वेतनमान मिलता है"।

16. शोध सहायकों (जूनियर लेक्चरर या समकक्ष पदधारण करने वाले शिक्षकों के रूप में नामित) को लेक्चरर के रूप में नामित किए जाने के बाद, उन्हें बाद में सहायक प्रोफेसर के रूप में फिर से नामित किया गया, जो लेक्चरर/सहायक प्रोफेसर जैसे अन्य संकाय सदस्यों के लिए स्वीकार्य समान वेतनमान प्राप्त कर रहे थे। इसके बाद, भारत सरकार ने विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में शिक्षकों के वेतनमानों में संशोधन करने के लिए 22.07.1988 के पत्र के माध्यम से सी.ए.एस. को अधिसूचित किया। प्रत्येक लेक्चरर को 3000-5000 रुपये के वरिष्ठ वेतनमान में रखा जाना था, यदि उसने नियमित नियुक्ति के बाद 8 साल की सेवा पूरी कर ली हो। इसके अनुसार, बोर्ड ने 24.11.1988 को आयोजित अपनी बैठक में लेक्चरर और शोध सहायकों को संशोधित यूजीसी वेतनमान देने का संकल्प लिया। बोर्ड ने शोध सहायकों और व्याख्याताओं को सहायक प्रोफेसर के रूप में नामित करने का भी संकल्प लिया। हालांकि, यह निर्णय लिया गया कि सहायक प्रोफेसर के रूप में विधिवत/ सीधे नियुक्त किए गए व्यक्ति सहायक प्रोफेसर के रूप में नामित व्याख्याताओं/शोधसहायकों से

वरिष्ठ होंगे। इस संकल्प की बोर्ड द्वारा 28.01.1989 की बैठक में फिर से समीक्षा की गई और की पुष्टि की गई, उसके बाद 04/06.05.1989 की अधिसूचना जारी की गई जिस भी विधिवत चयनित व्याख्याताओं/शोधसहायकों को 01.01.1973 से सहायक प्रोफेसर के रूप में नामित किया जाएगा। बोर्ड ने संकल्प संख्या 245 दिनांक 08.08.1990 के तहत सहायक प्रोफेसरों के लिए सी.ए.एस. को लागू करने के नियमों को मंजूरी दी और अंत में, 22.11.1990 के पत्र के माध्यम से अपीलार्थी ने उक्त नियमों को अधिसूचित किया। इस स्तर पर, जब अपीलार्थी ने राज्य सरकार से बोर्ड के 24.11.1988 के संकल्प को मंजूरी देने का अनुरोध किया, तो राज्य सरकार ने कुलपति से उक्त संकल्प को रद्द करने के लिए संपर्क किया। इस बीच, राज्य सरकार द्वारा अनुमोदन की प्रत्याशा में, अपीलार्थी ने पहले ही अपेक्षित आदेश जारी कर दिए थे।

17. इसके बाद, बोर्ड ने दिनांक 29.07.1991 की अपनी बैठक में संकल्प लिया कि यदि किसी शोध सहायक/व्याख्याता को एसएससी द्वारा सहायक प्रोफेसर के रूप में चुना गया है, तो उसकी सेवा अवधि की गणना उस तिथि से की जाएगी, जब उसे एसएससी द्वारा सहायक प्रोफेसर के रूप में विधिवत चुना गया था। एक बार फिर, राजस्थान सरकार के कृषि विभाग के उपसचिव के पत्र दिनांक 27.05.1992 के तहत विश्वविद्यालय से बोर्ड के दिनांक 29.07.1991 के संकल्प में संशोधन करने का अनुरोध किया गया, जिसमें कहा गया कि जिस आदेश के द्वारा शोधसहायकों/व्याख्याताओं को सहायक प्रोफेसर के रूप में नामित किया

गया था, उसे वापस लिया जाए और सी.ए.एस. का लाभ केवल उन सहायक प्रोफेसरों को दिया जाए, जिन्हें एस.एस.सी. द्वारा सीधे/नियमित रूप से चुना गया था, न कि उन्हें जो सहायक प्रोफेसर के रूप में नामित किए गए थे। इस प्रकार, विश्वविद्यालय और इसके बोर्ड द्वारा की गई सिफारिशें राज्य सरकार द्वारा स्वीकार नहीं की गईं। जिसने उच्च न्यायालय में इस तरह की कार्रवाइयों का विरोध करते हुए विभिन्न रिट याचिकाएँ दायर करने को प्रेरित किया।

18. यह पता चला है कि पहले भी इन शोध सहायकों का मामला उच्च न्यायालय में था, जहां दावा किया गया था कि शोध सहायकों को शोध करने और मार्गदर्शन करने के उद्देश्य से नियुक्त किया गया था और इसलिए उन्हें उदयपुर विश्वविद्यालय अधिनियम, 1962 की धारा 2(जे) के प्रयोजनों के लिए शिक्षक माना जाना चाहिए। उक्त राहत उच्च न्यायालय की विद्वान एकल पीठ द्वारा दी गई थी, जिसके बाद राजस्थान राज्य ने खंडपीठ के समक्ष एक अंतर-न्यायालय अपील पेश की, जहां उसे सफलता नहीं मिली। विद्वान एकल न्यायाधीश ने प्रतिवादियों की रिट याचिकाओं को स्वीकार किया और माना कि व्याख्याता/सहायक प्रोफेसर के रूप में प्रतिवादियों द्वारा पुनः पदनाम के बाद दी गई सेवा की अवधि को भी सी.ए.एस. का लाभ उठाने के लिए 8 वर्ष की अवधि की गणना करते समय गिना जा सकता है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह भी विचार किया कि प्रत्यर्थी गण इस शर्त के साथ परिणामी लाभों के हकदार होंगे कि उन्हें सीधे नियुक्त सहायक प्रोफेसरों पर वरिष्ठता नहीं दी जाएगी और

प्रत्यर्थी सीधे नियुक्त व्यक्तियों से कनिष्ठ होंगे। खंडपीठ ने अभिनिर्धारित किया कि चूंकि शोध सहायक का पद व्याख्याता के पद में शामिल था, इसलिए शोध सहायक को वेतनमान के उसी संशोधन के लिए हकदार माना जाना चाहिए जो विश्वविद्यालय के व्याख्याता को दिया गया है, जो कि ऐसा किया गया था। विद्वान एकल न्यायाधीश के साथ सहमत खंडपीठ पर आपत्ति जताते हुए, राजस्थान राज्य ने इस न्यायालय में भी याचिका दायर की, जिसका फिर से राज्य को कोई लाभ नहीं हुआ।

19. उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह सूक्ष्म अंतर करने में गलती की कि रिट याचिका संख्या 9555/1984 और 25.04.1985 के अनुरूप मामलों में इस न्यायालय का आदेश केवल वरिष्ठता और एक अलग कैडर के अस्तित्व के संबंध में था। उल्लेखनीय बात यह है कि इस आदेश का वेतनमान से कोई लेना-देना नहीं था।

20. हम पाते हैं कि ऐसा दृष्टिकोण केवल उत्तरदाताओं को यूजीसी की सिफारिशों के अनुसार वेतनमान/संशोधित वेतनमान प्रदान करने की सीमा तक ही उचित है। हालांकि, सी.ए.एस. वेतनमान में सामान्य वृद्धि या संशोधन से अलग था। सी.ए.एस. का उद्देश्य एक विशिष्ट उद्देश्य के लिए था — अर्थात्, विभिन्न शर्तों के अधीन, उच्च वेतनमान प्रदान करके शिक्षण कर्मचारियों को प्रोत्साहित करना। दुर्भाग्य से, विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस अंतर को नज़रअंदाज़ कर दिया है, जो कि हमारी सुविचारित राय में विचार करने के लिए एक महत्वपूर्ण कारक था। जब भी कोई योजना/नीति लागू की जाती है, तो अन्य सभी चीज़ें समान रहने पर, न्यायालय ऐसी कोई चीज़ आयात नहीं कर सकता और न ही करेगा, जो उसमें मौजूद नहीं है और जिसमें

हस्तक्षेप करना उचित नहीं हो सकता है — खासकर जब यह वित्तीय मामलों से संबंधित हो, जहाँ संबंधित कर्मचारियों की श्रेणी को किस वेतनमान को प्रदान किया जाना था, इस बारे में वेतन-स्वामी को प्राथमिकता दी जानी आवश्यक है। अपनी प्रकृति के अनुसार, ऐसा अभ्यास नीति-निर्माण के दायरे में आएगा। वर्तमान मामले में, सी.ए.एस. ने स्वयं यह परिकल्पना की थी कि यह उन व्यक्तियों के लिए है जिन्हें सहायक प्रोफेसर के रूप में सीधे भर्ती किया गया था। सी.ए.एस. ने विशेष रूप से प्रावधान किया था कि प्रत्येक व्याख्याता को ₹3000-₹5000 रुपये के वरिष्ठ वेतनमान में रखा जाना था, यदि उसने नियमित नियुक्ति के बाद 8 वर्ष की सेवा पूरी कर ली हो।

21. यहाँ एक क्षण रुककर, "नियमित नियुक्ति" शब्द/वाक्यांश के उपयोग को उचित व्याख्या दी जानी चाहिए और इसे निरर्थक या अनावश्यक नहीं माना जा सकता। यहाँ, पुनर्पदनामांकन और नियमित नियुक्ति के बीच अंतर है। पुनः पदनामांकन को नियमित नियुक्ति नहीं कहा जा सकता क्योंकि यह केवल एक पद/श्रेणी/कैडर है जिसे किसी अन्य मौजूद पद/श्रेणी/कैडर के साथ समतुल्यता दी गई है, लेकिन बुनियादी अंतर अभी भी यह होगा कि पुनः नामित पद/श्रेणी/कैडर को हमेशा लेक्चरर/असिस्टेंट प्रोफेसर के समकक्ष पद माना जाएगा, जबकि अन्य/मुख्य कैडर को हमेशा केवल सीधी भर्ती वाले लोगों से जुड़ा माना जाएगा। हम अपनी समझ को इस न्यायालय के दिनांक 25.04.1985 (सुप्रा) के आदेश के अनुरूप पाते हैं, जिसमें यह स्पष्ट किया गया है कि शोध सहायकों और लेक्चरर के पद अलग-अलग कैडर बनेंगे।

22. यदि कानून में यह स्थिति थी कि व्याख्याता/सहायक प्रोफेसर के रूप में पुनर्नामित अनुसंधान सहायकों का कैडर और सीधे भर्ती किए गए व्याख्याता/सहायक प्रोफेसरों का कैडर एक ही था, तो इस न्यायालय के लिए अलग-अलग कैडर बनाकर रखने के लिए स्पष्ट रूप से निर्देश देने का कोई कारण नहीं था और केवल एक स्पष्टीकरण की आवश्यकता होती कि दो अलग-अलग कैडर से आने वाले व्यक्तियों को एक समान कैडर में कैसे रखा जाएगा। लेकिन एक समान कैडर की कोई आवश्यकता नहीं थी क्योंकि कैडर अलग और विशिष्ट थे। उल्लेखनीय रूप से, सी.ए.एस. स्वयं उन व्यक्तियों को लाभ प्रदान करने को प्रतिबंधित करता है जिन्होंने "नियमित नियुक्ति के बाद" आठ वर्ष की सेवा पूरी कर ली है — यह स्पष्ट इरादा दर्शाता है कि दोनों में से कौन सा कैडर उन लाभों का विषय था। इस प्रकार, सी.ए.एस. में कोई अस्पष्टता नहीं थी। यदि इरादा यह था कि लाभ दोनों कैडर को समान रूप से मिलना चाहिए, तो इसे उन व्यक्तियों तक सीमित करने की कोई आवश्यकता नहीं थी जिन्होंने नियमित नियुक्ति के बाद आठ वर्ष की सेवा पूरी कर ली थी।

23. महत्वपूर्ण बात यह है कि इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि पुनर्नामित अनुसंधान सहायक/सहायक प्रोफेसर (प्रत्यर्थी) को कभी भी सीधे व्याख्याता/सहायक प्रोफेसर के रूप में नियुक्त नहीं किया गया था। महाराष्ट्र राज्य बनाम तारा अश्विन पटेल, (2016) 15 एससीसी 717 में इस न्यायालय ने माना:

'9. इसलिए, हमने पहले सिद्धांतों पर वर्तमान अपीलों की जांच की है। 25-10-1977 और 27-2-1989 के दो प्रस्तावों को पढ़ने से हमें पता चलता है कि करियर में उन्नति के उद्देश्य से अपीलकर्ताओं ने डेमोस्ट्रेटर/ट्यूटर के पद को लेक्चरर के पद पर अपग्रेड किया था और ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिवादियों को अपग्रेडेशन की अवधि यानी 1-7-1975 से 25-10-1977 तक वेतन भी मिल रहा था। हालाँकि, वरिष्ठ वेतनमान प्रदान करने के उद्देश्यों के लिए तथा तत्पश्चात चयन ग्रेड प्रदान करने के लिए, उक्त संकल्पों के अनुसार व्याख्याता के पद पर वास्तविक सेवा या नियमित नियुक्ति की आवश्यकता थी। इस प्रकार, प्रतिवादियों के पास 1-7-1975 से 25-10-1977 तक उन्नयन की मानी गई स्थिति का लाभ नहीं था और न ही वे इसका लाभ प्राप्त कर सकते हैं। मानी गई स्थिति स्पष्ट रूप से वेतन और अन्य भत्तों के प्रयोजनों के लिए थी और व्याख्याता के पद पर प्रतिवादियों द्वारा दी गई वास्तविक शारीरिक सेवा के लिए इसकी गणना नहीं की जा सकती।

(जोर दिया गया)

24. इस प्रकार, तथ्यों और परिस्थितियों के समग्र परिवेक्षण पर, यह स्पष्ट है कि शोध सहायकों को व्याख्याता/सहायक प्रोफेसर के रूप में पुनः नामित किए जाने पर, उन्हें सीधे भर्ती किए गए व्याख्याताओं के लिए लागू समान वेतनमान के रूप में उनका हक मिला,

लेकिन जब सी.ए.एस. की बात आई, तो सी.ए.एस. ने विशेष रूप से परिकल्पना की कि इसके तहत लाभ नियमित नियुक्ति के बाद 8 वर्ष की सेवा पूरी करने वाले व्यक्तियों तक ही सीमित था। केवल इस कारण से कि प्रत्यर्थी गण को सीधे भर्ती किए गए लोगों के समान वेतनमान मिल रहा था, वे सी.ए.एस. का लाभ पाने के हकदार नहीं होंगे क्योंकि यह कुछ शर्तों को पूरा करने के अधीन था, जिसमें 8 वर्ष यानी कुछ निश्चित वर्षों की सेवा पूरी करना शामिल था। जब तक एक योजना के रूप में सी.ए.एस. में हस्तक्षेप नहीं किया गया था, तब तक विद्वान एकल न्यायाधीश के लिए इसकी व्याख्या इस तरह से करना उचित नहीं था, जिससे दो अलग-अलग संवर्गों के बीच का अंतर मिट जाए। हम यह भी जोड़ सकते हैं कि अगर इरादा यह था कि सभी एक ही मंच पर आएँ और सभी उत्तरवर्ती लाभ प्राप्त करें, तो दो कैडर रखने/बनाए रखने की कोई आवश्यकता नहीं थी। इसके अलावा, इस न्यायालय को यह स्पष्ट करने की कोई आवश्यकता नहीं थी कि पुनः नामित और प्रत्यक्ष नियुक्त व्यक्तियों की अलग-अलग पहचान होगी, अगर सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए, तथ्यों या कानून में कोई अंतर नहीं किया जाना था। हालाँकि, इस न्यायालय ने स्पष्ट किया कि अलगाव होगा क्योंकि दो कैडर बने रहेंगे, जो दोनों के बीच अंतर का संकेत है। वास्तव में, एक को दिए गए लाभ दूसरे को तब तक नहीं मिलेंगे जब तक कि संबंधित योजना में ऐसा निर्दिष्ट न किया जाए, जैसा कि नियोक्ता यानी राज्य सरकार/विश्वविद्यालय द्वारा तैयार किया जा सकता है।

25. तदनुसार, उपर्युक्त कारणों से, ये अपीलें सफल होती हैं; विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित और खंडपीठ द्वारा पुष्टि किए गए आदेश, अपास्त किए जाते हैं। यह माना जाता है कि रिट याचिकाकर्ता/निजी प्रत्यर्थी सी.ए.एस. के तहत लाभ के हकदार नहीं हैं, जैसा कि भारत सरकार के पत्र दिनांक 22.07.1988 द्वारा अधिसूचित किया गया है।

26. यह कहने की ज़रूरत नहीं है कि अगर न्यायालय के आदेश के तहत दोनों कैडरों को बिल्कुल समान लाभ दिए जाते हैं, तो यह अप्रत्यक्ष रूप से कुछ ऐसा करने के बराबर होगा जो सीधे तौर पर नहीं किया जा सकता। इसके अलावा, ऊपर उल्लिखित मुकदमे के पहले दौर में इसे काफी हद तक नकार दिया गया था।

27. हम यह स्पष्ट कर सकते हैं कि प्रत्यर्थी गण संख्या 1 से 54 को पहले से वितरित की गई धनराशि की किसी भी वसूली के लिए निर्देश देना इस विलंबित चरण में असमानता के समान होगा। इसलिए, इसे वसूल नहीं किया जाएगा, लेकिन सेवानिवृत्ति/सेवा शर्तों और सेवानिवृत्ति के उत्तरवर्ती लाभों के प्रयोजनों के लिए सभी वेतन और परिलब्धियों को सी.ए.एस. के तहत कोई लाभ दिए बिना काल्पनिक रूप से गिना जाएगा। यह मानते हुए कि प्रतिवादी किसी अन्य योजना/नीति के तहत किसी भी लाभ के हकदार हैं, यह निर्देश दिया जाता है कि राज्य सरकार या अपीलार्थी केवल तत्काल निर्णय के आधार पर प्रत्यर्थी गण को इससे वंचित नहीं करेंगे।

28. एसएलपी (सी) संख्या 22278/2011 और 22813/2011 से उत्पन्न सिविल अपीलों का निपटारा उपरोक्त तरीके से किया जाता है।

29. एसएलपी (सी) संख्या 30963/2018 से उत्पन्न सिविल अपील पर, जिसकी उत्पत्ति डिवीजन बेंच द्वारा पारित दिनांक 04.05.2018 के आदेश से हुई है। इसे इस न्यायालय के दिनांक 30.11.2018 के आदेश द्वारा एसएलपी (सी) संख्या 22813/2011 के साथ टैग किया गया था। इस मामले में, प्रत्यर्थी गण संख्या 1 से 9, विश्वविद्यालय में सहायक प्रोफेसर के रूप में अपनी नियमित नियुक्ति से पहले, अन्य शैक्षणिक संस्थानों और विश्वविद्यालय में भी तदर्थ आधार पर सेवा करते थे। इन प्रत्यर्थी गण ने सी.ए.एस. के तहत वरिष्ठ वेतनमान के अनुदान के लिए उनकी पात्रता निर्धारित करते समय ऐसी तदर्थ क्षमता में प्रदान की गई उनकी सेवाओं को ध्यान में रखने की प्रार्थना के साथ एक रिट याचिका दायर की। दावा की गई राहत विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दी गई तथा राजस्थान राज्य बनाम मिलापचंद जैन, (2013) 14 एस.सी.सी. 562 के निर्णय पर भरोसा करते हुए खंडपीठ द्वारा पुष्टि की गई। मिलापचंद जैन (सुप्रा) का निपटारा करते हुए इस न्यायालय ने सिविल अपील संख्या 469/2007 में राजस्थान राज्य बनाम डॉ. सुरेशचंद अग्रवाल नामक अपने पहले के निर्णय दिनांक 10.03.2011 पर भरोसा किया, जिसे कानून के प्रश्न को खुला छोड़ते हुए समय रहते खारिज कर दिया गया था। डॉ. सुरेशचंद अग्रवाल (सुप्रा) में दायर समीक्षा याचिका (सिविल) संख्या 2124-2125/2011 को भी इस न्यायालय द्वारा 14.09.2011 को खारिज कर दिया गया

था। मिलापचंद जैन (सुप्रा) में, राजस्थान राज्य इसी विवादित आदेश के संबंध में इस न्यायालय में याचिका दायर की थी, जिसके विरुद्ध अपील इस न्यायालय द्वारा पहले ही खारिज कर दी गई थी।

30. उल्लेखनीय रूप से, राज्य सरकार ने अपने पत्र दिनांक 20.09.1994 के माध्यम से स्पष्ट किया था कि प्रतिवादियों/सहायक प्रोफेसरों द्वारा दी गई तदर्थ सेवा की अवधि को सी.ए.एस. के तहत वरिष्ठ वेतनमान का लाभ देने के लिए नहीं गिना जाएगा। हम पहले ही विस्तार से सुप्रा 10 बता चुके हैं कि सी.ए.एस. अनिवार्य रूप से एक नीति है, और इस तरह, प्रत्यर्थी गण यह दावा नहीं कर सकते हैं, और न ही उनके पास यह दावा करने का कोई निहित अधिकार है कि इसमें दिए गए खंडों की किसी विशेष तरीके से व्याख्या की जाए। इस तरह की व्याख्यात्मक प्रयोग को अपीलार्थी के अधिकार क्षेत्र में छोड़ना होगा, जो राज्य सरकार के निर्देशों के अधीन होगा, जब तक कि वे स्पष्ट रूप से विकृत या मनमाने न हों। इसलिए, उच्च न्यायालय सी.ए.एस. को लागू करने के लिए आवश्यक गणना की अवधि की गणना करने के लिए प्रत्यर्थी गण द्वारा दी गई तदर्थ सेवा की गणना करने में न्यायोचित नहीं था।

31. हालांकि, यह निर्देश दिया जाता है कि प्रत्यर्थी गण से कोई वसूली नहीं की जाएगी। प्रत्यर्थी गण अपनी सेवानिवृत्ति/सेवा शर्तों और सेवानिवृत्ति के उत्तरवर्ती लाभों की गणना के प्रयोजनों के लिए वेतन और परिलब्धियों के काल्पनिक लाभ के हकदार होंगे, लेकिन

सी.ए.एस. के तहत किसी भी लाभ के अनुदान के बिना। यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि प्रत्यर्थी गण अपनी नियमित नियुक्ति की तारीख से आठ साल की सेवा की गणना के बाद सी.ए.एस. के तहत लाभ या किसी अन्य योजना/नीति के तहत लाभ के हकदार हैं, तो राज्य सरकार या अपीलार्थी केवल इस निर्णय के आधार पर उन्हें ऐसे लाभ से वंचित नहीं करेंगे।

32. तदनुसार, पूर्वोक्त कारणों से, अपील 11 सफल होती है। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित और खंडपीठ द्वारा पुष्टि किए गए आदेश, एतद्वारा रद्द और अपास्त किए जाते हैं।

33. पक्षकारों को अपना व्यय स्वयं वहन करना होगा। अपीलों पर अंतिम रूप से गुण-दोष के आधार पर निर्णय लिए जाने के बाद, इनके प्रकाश में, लंबित आवेदनों का निपटारा किया जा रहा है।

. न्यायाधिपति

हिमा कोहली

. न्यायाधिपति

अहसानुद्दीन अमानुल्लाह

नई दिल्ली

अगस्त 06, 2024

अर्जितासिंह

1 - को इसके बाद एस.एल.पी.(सी) कहा जाएगा।

2 - को इसके बाद 'उच्च न्यायालय' कहा जाएगा।

- 3 - को इसके बाद 'विश्वविद्यालय' कहा जाएगा।
- 4 - को आगे 'यूजीसी' कहा जाएगा।
- 5 - को आगे 'सीएस.' कहा जाएगा।
- 6 - को इसके बाद 'राज्य सरकार' कहा जाएगा।
- 7 - को आगे 'बोर्ड' कहा जाएगा।
- 8 - को आगे इसे 'एसएससी' कहा जाएगा।
- 9 - जिसे आगे चलकर '1974 अधिनियम' कहा जाएगा।
- 10 - एसएलपी (सी) संख्या 22278/2011 और 22813/2011 से उत्पन्न सिविल अपीलों पर हमारी चर्चा का विषय ।
- 11-एसएलपी(सी) संख्या 30963/2018 से उत्पन्न सिविल अपील।

यह अनुवाद अनुवादक अर्जिता सिंह (एडवोकेट) के द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण – इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेज़ी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।